पूज्य लालचंदभाई का प्रवचन
श्री समयसार, गाथा १३, २७८-२७९ ता. ०५-०२-१९८९
राजकोट पंचकल्याणक, प्रवचन नंबर ११२

यह समयसारजी परमागम शास्त्र है। समयसार का अर्थ है शुद्धात्मा। ये शुद्धात्मा अनादि से शुद्ध ही है और अभी भी शुद्ध रहा है और आगामी अनंतकाल आये तो भी यह शुद्ध ही रहनेवाला है; वो त्रिकाल शुद्ध है। अशुद्धता होती है और अशुद्धता टलती है और शुद्ध होता है, ऐसा आत्मा का स्वभाव नहीं है। परिणाम अशुद्ध होता है और परिणाम शुद्ध होता है मगर जो नवतत्त्व से भिन्न जो शुद्धात्मा दृष्टि का विषय है, वो तो अनादि-अनंत शुद्ध है। ऐसे शुद्ध परमात्मा का स्वरूप क्या है? अज्ञानी ने आज तक ऐसे शुद्धात्मा का अनुभव नहीं किया। ये अनादि मिथ्यादृष्टि की अपेक्षा से मैं कहता हूँ। सादि मिथ्यादृष्टि हो गया, वो बात अलग है। अनादि मिथ्यादृष्टि जीव ने एक समयमात्र अपने शुद्धात्मा को जाना नहीं, पहचाना नहीं और उसकी श्रद्धा भी की नहीं। ऐसा निज परमात्म द्रव्य, जो त्रिकाल शुद्ध है; 'होना' वह आत्मा का स्वभाव नहीं है, 'है' वह आत्मा का स्वभाव है; 'करना' नहीं है, 'होना' नहीं है, मगर 'है' रह गया।

एक बार जयपुर में यह बात की, तो अपने क्या नाम (है उनका)? गजाबेन! गजाबेन वहाँ थी। आँख में से अश्रु आ गए और पंडितजी, अपने भारिल्लजी साहब बोले कि यह तो सूत्र हो गया। आहाहा! 'करना' नहीं है, 'होना' नहीं है, मगर 'है' रह गया है। 'है' तो रह गया है। ऐसे शुद्धात्मा का स्वरूप बतानेवाले; ये हिंदी में थोड़ा अक्षर में फेरफार हो तो क्षमा करना, व्याकरण आदि में पंडित लोग, आहाहा! दोष ग्रहण नहीं करना, भाषा का दोष ग्रहण नहीं करना। भाव में दोष आनेवाला नहीं है। आहाहा! ये कुंदकुंदाचार्य भगवान ने जब लिखा कि दोष ग्रहण नहीं करना, तो कोई कहे कि उनको शंका हो गई। अरे! वो भाषा के दोष की बात है, भाव में दोष की बात है नहीं। तू समझता ही नहीं है। आहाहा! कोई भाषा में कोई व्याकरण आदि का दोष आ जावे तो शब्द-म्लेच्छ नहीं होना। आहाहा! हमारा कहने का आशय ख्याल में लेना।

तो ये जो शुद्धात्मा है, ये शुद्धात्मा ही सूक्ष्म है। और शुद्धात्मा का जो अनुभव, जो अतीन्द्रियज्ञान की पर्याय में होता है न, वो भी सूक्ष्म है। इन्द्रियज्ञान स्थूल है, शास्त्रज्ञान स्थूल है और आत्मज्ञान सूक्ष्म है। उस सूक्ष्म ज्ञान से शुद्धात्मा का अनुभव होता है। ऐसे शुद्धात्मा की चर्चा इस समयसार में १३ नंबर की गाथा में चलती है उसका अध्ययन अपने को करना है।

तो यहाँ तक तो आया कि ये जो होने योग्य होता है, 'परिणाम होने योग्य होता है'। थवा योग्य और करनार, गुजराती में क्या आया? थवा योग्य और करनार। हिंदी में क्या आता है? होने योग्य और करनेवाला। वो दो प्रकार के जो परिणाम हैं, एक परिणाम का नाम जीव है और दूसरे परिणाम का नाम अजीव है। तो संवर और निर्जरा का आत्मा कर्ता भी नहीं है और आत्मा उसका कारण भी नहीं है। जरा सूक्ष्म बात लेनी है अभी। आहाहा!

कि मोक्ष होता है न, मोक्ष, परिणाम में मोक्ष होता है, उस मोक्ष का कर्ता भगवान आत्मा नहीं है। यदि आत्मा मोक्ष का कर्ता हो, तो मोक्ष तो बंध के अभावपूर्वक ही होता है; तो यदि आत्मद्रव्य मोक्ष का करनेवाला हो तो अपने-आप वो बंध का कर्ता हो जाता है, इसलिए आत्मा मोक्ष का कर्ता नहीं है। मोक्ष का जाननेवाला है, इतना कहो तो कहो। इतना कहो तो कहो, सचमुच तो अभेद को जाननेवाला है। आहाहा!

दूसरा, और मोक्ष का कारण भी नहीं है। दो बात इसमें से लेना है। क्या लिखा है? कि **क्योंकि** अभी नौ-तत्त्व की बात की। होने योग्य और करनेवाला, ऐसा बताया न? क्षणिक-उपादान और निमित्त की अपेक्षा से नैमित्तिक, दो बातें ली। तो वो जो परिणाम होता है, मोक्ष तक का परिणाम होता है, उसमें कारण कौन है? वो चर्चा करनी है।

क्योंकि एकके ही अपने आप पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बन्ध, मोक्षकी उपपत्ति (सिद्धि) नहीं बनती। अकेला आत्मा ही इन नौ-तत्त्व का, भेद का, बंध-मोक्ष का कारण बन जाये ऐसा कारण आत्मा में है ही नहीं। आत्मा अकारण परमात्मा है, किसी का कारण आत्मा नहीं है। नोकर्म और कर्म बंधते हैं उसका कारणपना तो उसमें है ही नहीं; मगर मिथ्यात्व का परिणाम जब होता है तब भी, उस मिथ्यात्व के परिणाम का आत्मा कर्ता नहीं है। और मिथ्यात्व का परिणाम होता है, उसका कर्ता तो न हो तो न हो, मगर मिथ्यात्व का परिणाम प्रगट होता है उसका कारण भी आत्मा नहीं है। (अज्ञानी कहे कि) एकांत हो जाएगा। सम्यक् एकांत हो जाएगा। भैया, तेरा काम होनेवाला है अभी! वो तेरी जो मान्यता है (उसको) deposit (जमा) करके, एक नई बात (जो) आचार्य भगवान फरमाते हैं, तू सुन तो सही।

व्यवहार का उपदेश तो जगह-जगह मिलेगा परंतु शुद्धनय का उपदेश विरल (दुर्लभ) है। आहाहा! शुद्धनय का पक्ष भी नहीं आया और उसका उपदेश भी विरल है। कहीं-कहीं (है)। आहाहा! सोनगढ़ जैसे स्वर्ण क्षेत्र में होता है वो तो। आहाहा!

यह आत्मा है, (वो) अकेला-अकेला, अकेला-अकेला बंध-मोक्ष के कारणरूप परिणमे ऐसा कारणपना उसमें नहीं है। बंध के कारणरूप परिणमे- आत्मा कारण हो जाए और मिथ्यात्व, बंध का परिणाम कार्य हो जाए, तो-तो यह आत्मा अनादि-अनंत है तो मिथ्यात्व का ये (आत्मा) कारण बन जाए तो मिथ्यात्व का अभाव होकर सम्यग्दर्शन भी प्रगट हो सकता नहीं है। सूक्ष्म बात है! इसके लिए थोड़ा आधार, मैं अभी बंध अधिकार की गाथा का (आधार) दूँगा, तो ख्याल में आ जाएगा। सब सूक्ष्म बात है!

ये भगवान जो आत्मा दृष्टि का विषय है, उसको दृष्टि का विषय कहो, उपादेय तत्त्व कहो, ज्ञायक तत्त्व कहो, निजानंद परमात्म तत्त्व कहो और अकेला-अकेला परिणामी स्वभाव, परिणाम स्वभाव होने पर भी वो परिणाम का कर्ता नहीं है (और) परिणाम का कारण नहीं है। त्रिकाली द्रव्य तो कारण नहीं है। सूक्ष्म बात है! शांति से सुनना। आहाहा! आत्मा अकेला-अकेला अपने आप रागरूप परिणमे और अपने आप वीतरागरूप परिणमे, उसमें कारण आत्मा बन जाए ऐसा आत्मा का स्वभाव नहीं है। आत्मा अकारण ही है, किसी का कारण नहीं है। इसके लिए बंध अधिकार की गाथा २७८-२७९ में स्फटिक के दृष्टांत से वो बात सिद्ध हो जाएगी।

२७८-२७९ (गाथा) की टीका है। ये जो अपना विषय चलता है न, कि अपना आत्मा अकेला-अकेला, वो कारण होता नहीं है। उसमें अजीव निमित्त है। उसका कारण कहना हो तो अजीव को कहो, मेरे को मत कहो। वो भी निमित्तकारण, उपादानकारण तो पर्याय है। बहुत चर्चा निरपेक्ष-सापेक्ष की हो गई है।

टीका:- जैसे वास्तवमें केवल अर्थात् **(-अकेला)** केवल का अर्थ क्या? **(-अकेला) स्फटिकमणि,** स्फटिकमणि अकेला पड़ा हो, समझो। तो वो अकेला, **केवल (-अकेला) स्फटिकमणि, स्वयं** देखो आगे चलती है अभी बात। एक त्रिकाली स्फटिक की बात की। अभी **स्वयं** स्फटिकमणि **परिणमनस्वभाववाला होने पर भी,** अपरिणामी तो है और प्लस (+) उसका परिणाम भी, स्वच्छता का परिणाम होता है। **परिणमनस्वभाववाला होने पर भी, अपनेको** यानि स्फटिक को **शुद्धस्वभावत्वके कारण** आहाहा! यह स्फटिकमणि है न, स्फटिकमणि, वो शुद्ध स्वभाववाला ही है। आहाहा! उसका स्वभाव ही शुद्ध है। उसका स्वभाव ही शुद्ध है। **शुद्धस्वभावत्वके कारण रागादिका निमित्तत्व न होनेसे** स्फटिकमणि-त्रिकाली लाल पर्याय का निमित्त नहीं होता है, लाल पर्याय का। और उसका जो परिणमन है वो भी लाल का कारण होता नहीं है। अकेला-अकेला स्फटिकमणि लालरूप परिणमता नहीं है। आहाहा! कि भावबंध की सिद्धि करना है, व्यवहार का कथन है। सुनना जरा शांति से, दृष्टांत से।

शुद्धस्वभावत्वके कारण रागादिका निमित्तत्व न होनेसे लाल पर्याय होती है न, नैमित्तिक, फूल निमित्त और लाल पर्याय उसकी योग्यता हो तो नैमित्तिक लाल होती है। आहाहा! होती है, ऐसी अपरीक्षक को ख्याल में आती है। परीक्षक तो कहता है लाल होती नहीं है। आहाहा! पर्यायदृष्टि से देखो तो परिणाम लाल हुआ है। द्रव्यदृष्टि से देखो तो फूल के निमित्त के सद्भाव के काल में भी वह तो स्वच्छ ही परिणमन है।

एक मुमुक्षु ने, उसके स्वर्गवास का टाइम नजदीक आया तो (उन्होंने) राजकोट संघ को कहा, कि जरा हमको स्वाध्याय कराने के लिए (आप) सब (लोग) आना। तो हम सब जाते थे, खीमचंदभाई भी उस टाइम थे। आहाहा! उनको एक बार कहा, २४ घंटे के बाद तो उनका स्वर्गवास होनेवाला था, मैंने कहा भाई, जब स्फटिकमणि के सामने लाल फूल है, तब स्फटिकमणि का परिणमन कैसा होता है? ये सर्वज्ञ भगवान की कही हुई बात मैं आपको कहता हूँ। आहाहा! विचार करना, उसमें मार्ग मिल जाएगा। आहाहा! बस इतना कहकर मैं तो मुंबई चला गया और दूसरे दिन तो उनका स्वर्गवास हो गया। परिणाम बहुत नरम थे उस टाइम, उसके परिणाम बहुत नरम हो गए। पूर्व का पश्चाताप भी (था)। आहाहा! भगवान! एक समय की भूल है। आहाहा! सबको (ये) अज्ञानी है, मिथ्यादृष्टि है, मिथ्यादृष्टि है, (ऐसा) मत देखो। सब भगवान हैं। परिणाम को गौण कर क्योंकि वो परिणाम उसका नहीं है। वो परिणाम भगवान आत्मा का नहीं है। मिथ्यात्व (के) परिणाम का भगवान आत्मा स्वामी है (क्या) उसका? आहाहा! परिणाम का स्वामी परिणाम है। आगे जाकर देखो तो पुद्गल उसका स्वामी है, भगवान आत्मा स्वामी नहीं है।

ऐसे शुद्ध **परिणमनस्वभाववाला होने पर भी,** स्फटिकमणि **अपनेको शुद्धस्वभावत्वके**

कारण रागादिका निमित्तत्व न होनेसे, उपादान तो स्फटिक नहीं है, लाल पर्याय हो तो उसमें उपादानकारण तो नहीं है, परंतु निमित्तकारण भी उसका नहीं है। निमित्तकारण फूल है। आहाहा! फूल को निमित्तपने देखो, स्फटिकमणि को निमित्तपने मत देखो, (अन्यथा) नित्य-निमित्तकर्ता का दोष आ जाएगा। अर्थात् **(स्वयं अपनेको लालई-आदिरूप परिणमनका निमित्त न होनेसे) अपने आप रागादिरूप नहीं परिणमता, किन्तु जो अपने आप रागादिभावको प्राप्त होनेसे स्फटिकमणिको रागादिका निमित्त होता है ऐसे परद्रव्यके द्वारा ही,** शुद्धस्वभावसे जब परिणति च्युत होती है तब (लाल) फूल को निमित्त कहा जाता है और लाल पर्याय को नैमित्तिक कहा जाता है। आहाहा!

निमित्त बलात्कार (जबरदस्ती) से स्फटिकमणि को लालरूप में परिणमाता नहीं है। स्वयं अपने आप स्वच्छभाव का त्याग करती है पर्याय, और लालरूप से परिणमती है तब फूल को निमित्त कहने में (आता है)। एक समय के लिए ही निमित्त कहने में आता है। आगे-पीछे निमित्त नहीं लेना। एक समय में निमित्त हुआ तो दूसरे समय (भी) निमित्त होगा और दूसरे समय लालरूप से परिणमेगा (ऐसा नहीं है); ऐसे आत्मा (को) राग में निमित्त पर है, तो पहले समय पर निमित्त होगा, दूसरे समय चारित्रमोह निमित्त होगा, (ऐसा) बिल्कुल है नहीं। एक समय का निमित्त-नैमित्तिक संबंध है, वो भी पर्यायार्थिकनय से है; द्रव्यार्थिकनय से तो निमित्त-नैमित्तिक संबंध का ही आत्मा में त्रिकाल अभाव है। आहाहा! गुजराती आ गई। कोशिश करता हूँ हिंदी बोलने की (परंतु) चूक जाता हूँ।

क्या कहा? रागादि का निमित्त नहीं है। राग होने पर भी राग का निमित्त (आत्मा) नहीं है। आत्मा की पर्याय में राग होने पर भी राग का कारण आत्मा नहीं है। कर्ता तो नहीं है (और) कारण भी नहीं है। आहाहा! कर्ता और कारण दो शब्द आते हैं; कर्ता उपादान की विवक्षा से है और कारण निमित्त की अपेक्षा से है। राग का कर्ता भी नहीं है और राग का कारण भी नहीं है। इसमें आएगा अभी।

ऐसे परद्रव्यके द्वारा ही, शुद्धस्वभावसे च्युत होता हुआ ही, रागादिरूप परिणमित किया जाता है; इसीप्रकार अब यह बात आयी न, कि ये नवतत्त्व का परिणाम होने योग्य और करनेवाला, आया है न, उसमें आत्मा अकेला-अकेला, आहाहा! बंध-मोक्षरूप से परिणमता नहीं है। उसमें निमित्त अजीव है। अजीव से भी परिणमता नहीं है और त्रिकालीद्रव्य से भी परिणमता (नहीं है)। आहाहा! मगर परिणमता है तब अजीव को निमित्त कहा जाता (है)। स्वतंत्रपने होता है, तब परयोग को निमित्त कहा जाता है।

इसीप्रकार वास्तवमें केवल (-अकेला) आत्मा, अब अपना जो सिद्धांत है न, वो सिद्धांत इधर apply (लागू) करना है कि **इसीप्रकार वास्तवमें केवल (-अकेला) आत्मा,** ज्ञायक परमात्मा आहाहा! 'एकोऽहम्' आहाहा! आत्मा एक है। एक का दो नहीं होता है तो एक का नौ (कैसे हो)? आहाहा! वसंतभाई! कोई किसी का झगड़ा हो न, तो किसी को (मध्यस्थ को नामांकित करें) तो वहाँ से आया। भाई! उसको तो बहुत समझाया मगर एक का दो होता नहीं है (टस से मस होता नहीं है)। ऐसा बनता है। आहाहा!

ऐसे भगवान आत्मा एक का दो नहीं होता है तो एक का नौ कैसे हो सके? अपना त्रिकाल

एकत्व स्वभाव छोड़ता नहीं है और नौरूप होता (नहीं है)। व्यवहारनय कितनी भी बात करे, जहाँ-जहाँ व्यवहार की बात आवे वहाँ लगाना कि **व्यवहारनय दूसरे के भाव को दूसरे का कहता है** (समयसार गाथा ५६)। आहाहा! व्यवहारनय अभूतार्थ क्यों है? कि व्यवहारनय दूसरे के भाव को, दूसरे के भाव को.. दूसरे का क्या? ठीक है न? अच्छा, पंडितजी हैं। अच्छा! **दूसरे के भाव को दूसरे का कहता है**। राग है परिणाम का धर्म और व्यवहारनय क्या कहता है? आत्मा रागी हो गया, आत्मा रागी है, आत्मा ने राग किया। आत्मा ने ज्ञान किया या आत्मा ने राग किया? आहाहा! क्या है? वो राग का आत्मा कर्ता बन गया या आत्मा राग का कारण बन गया? (आत्मा) कर्ता भी नहीं है और कारण भी (नहीं है)। आत्मा रागरूप परिणमने पर भी वह राग के कारणपने कभी परिणमता (नहीं है), ऐसा पाठ है। आहाहा! कदाचित् स्वभाव से च्युत होकर रागादिरूप परिणमता है, थोड़े टाइम के लिए; हमेशा के लिए तो है ही नहीं, तो भी वो राग के कारणपने आत्मा कदापि परिणमता नहीं है। आहाहा! कलशटीका में आयी है ये बात।

तो इधर, **वास्तवमें केवल (-अकेला) आत्मा, स्वयं परिणमन-स्वभाववाला**; किसी को ऐसा लगे कि अपरिणामी हो, अपरिणामी तो राग का कारण नहीं बने; परंतु जब परिणामी है, तब तो राग का कर्ता और राग का कारण बने कि नहीं? कि परिणमन स्वभाव में होने पर भी वो राग का कर्ता बनता नहीं है और राग का कारण होता नहीं है। आहाहा!

(समयसार) ३२० गाथा है, उसमें लिया है कि शुद्धज्ञान और शुद्धज्ञान परिणत जीव भी आहाहा! इस बंध-मोक्ष का कर्ता नहीं है, उदय का कर्ता नहीं है, निर्जरा का कर्ता नहीं है। केवल जानता है, कर्ता है (नहीं)। त्रिकालीद्रव्य तो राग का कारण नहीं मगर जिसका लक्षण उपयोग है और उस उपयोग में आत्मा जानने में आता है, ऐसा परिणमन स्वभाव होने पर भी वह त्रिकालीद्रव्य या ज्ञान परिणत आत्मा राग का कर्ता बनता नहीं है, राग का कारण बनता नहीं है।

कल रात्रि का विषय अच्छा था। आहाहा! मोह के क्षय की गाथा। प्रभु! ये तू आत्मा को ज्ञाता होने पर भी कर्ता मानता है न, इसलिए समयसार में से तेरी (तत्त्व) निकालने की बुद्धि स्थूल हो गई है। आत्मा, सब आत्मा ज्ञाता हैं। जाहिर हो कि आत्मा सब ज्ञाता ही हैं, कोई आत्मा कर्ता है नहीं! ये सर्वज्ञ भगवान की दिव्यध्वनि में आया है। आहाहा! संतों ने शास्त्र में लिख दिया है। आहाहा! कर्ता तो नहीं है मगर इधर तो (कहा कि) कारण भी नहीं है। आत्मा अकारण परमात्मा है, किसी का कारण और किसी का कार्य है ही नहीं। आहाहा! कर्ता-कर्म अधिकार में तो ऐसा दिया है कि दुःख का अकारण है-कारण है (नहीं)। जो दुःख का कारण नहीं है, तो अतीन्द्रिय सुख का भी कारण नहीं है। सुन तो सही जरा! शांति से सुन तो सही, धीरज रखकर। आहाहा!

वास्तवमें केवल (-अकेला) आत्मा, अकेला आत्मा, अकेला आत्मा **स्वयं परिणमन-स्वभाववाला होने पर भी,** दो बात की। अपरिणामी तो है ही मगर आत्मा ज्ञानरूप से परिणमता भी है। तो ज्ञानरूप से परिणमता है तो राग का कारण बन जाता है? कि बिल्कुल बनता नहीं है। आहाहा! वो तो जाननेवाला है। **परिणमन-स्वभाववाला होने पर भी, अपनेको शुद्धस्वभावत्वके कारण रागादिका निमित्तत्व न होनेसे** भगवान आत्मा की पर्याय में राग होता है, तब की बात है। मोक्ष होता

है तो राग होता ही नहीं है। मोक्ष जब हो गया तो राग तो पर्याय में है ही नहीं; तो पर्याय का कारण नहीं है, तो चर्चा की बात है ही नहीं। मगर राग के सद्भाव के काल में राग का कारण आत्मा नहीं है; कर्ता भी नहीं है और कारण भी (नहीं है); उपादानकर्ता नहीं है और निमित्तकारण भी आत्मा में (नहीं)। राग के निमित्तकारण का अभाव है आत्मा में। सुन! मिथ्यात्व का परिणाम होता है तब भी मिथ्यात्व के परिणाम का आत्मा कर्ता नहीं है। और मिथ्यात्व का परिणाम होता है तो आत्मा के अस्तित्व के कारण से, आत्मा की मौजूदगी है इसलिए मिथ्यात्व होता है (ऐसा) आत्मा कारणरूप नहीं है। आहाहा! कारण-फारण नहीं, आत्मा तो ज्ञाता है। सूक्ष्म बात है! 'अकेला-अकेला' पाठ आया है न। अकेला-अकेला नौ-तत्त्वरूप नहीं परिणमता है। उसकी चर्चा है।

उसके आधाररूप से यह बात आई है कि **परिणमन-स्वभाववाला होने पर भी,** आहाहा! उपयोग लक्षण तो सब में है और जाननेरूप परिणमते हैं सब। परिणमते हैं कि नहीं परिणमते? जड़ जाननेरूप नहीं परिणमता। यह (कागज़) जड़ है न, वह जानन-क्रियारूप नहीं परिणमता। परंतु आत्मा तो जानन-क्रियारूप परिणमता है कि नहीं परिणमता है? तो जानन-क्रियारूप से परिणमता है उस ही समय वो राग का कारण है नहीं। त्रिकाली द्रव्य तो कारण है ही नहीं, वो तो बात अलौकिक है।

सूक्ष्म रहस्य है प्रभु! आहाहा! भगवान के श्रीमुख से आई हुई बात इस समयसार में आ गई। आहाहा! (कुंदकुंद आचार्य) साक्षात् आठ दिन रहे थे और सुनी थी वहाँ (दिव्य) वाणी, कोई माने या न माने। आहाहा! कुंदकुंद भगवान क्यों लिखकर नहीं गए (कि हम सदेह विदेह गए थे)? कुतर्कवाले अज्ञानी जीवों को, आहाहा! आत्मा की क्या शक्ति है, उसकी पर्याय की क्या शक्ति है, इसकी खबर होती नहीं है। आहाहा! क्यों लिखकर नहीं गए (कि हम सदेह विदेह गए थे)? आहाहा! वे लिखकर गए नहीं तो भी बात शत-प्रतिशत सच्ची है। लेकिन साक्षात् कह गए तो भी उनको मानते नहीं हैं। आहाहा! गुरुदेव के श्रीमुख से सुनी हुई बात है। कि तत्त्व की बात करो न! कि ये तत्त्व की ही बात है। गुरु के ऊपर की श्रद्धा से तू चलित हो गया है; (ऐसे चलित) मत होना। इसके लिए यह बात चलती है। आहाहा!

'हम वहाँ थे, राजकुमार के रूप में'- गुरुदेव की वाणी है यह हों! टेप में है सब, मेरे घर की बात (नहीं है)। आहाहा! 'हम वहाँ थे। कुंदकुंदाचार्य भगवान वहाँ पधारे थे, आठ दिन रहे थे। आहाहा! और केवली और श्रुतकेवली के पास विशेष स्पष्टीकरण उन्होंने किये थे।' मलाड में तो ऐसा कहा कि सीमंधर भगवान ने हमें यहाँ भेजा है। आहाहा! ऐसा कहा हों! (सोचो) कि ऐसे समर्थ पुरुष का जन्म एक जीव के लिए होता है? आहाहा! अनेक जीव पक गए हों, आहाहा! तैयारीवाले जीव हों न, सम्यग्दर्शन की तैयारीवाले, आहाहा! इसलिए हमारे लिए यहाँ वे पधारे थे और हमें शुद्धात्मा का उपदेश (दिया)।

शुद्धात्मा राग का कारण नहीं है। राग के सद्भाव के समय राग का कारण नहीं है। त्रिकाली द्रव्य तो नहीं परंतु जाननेरूप परिणमता है आत्मा, उपयोग लक्षणवाला है, उस समय परिणामी आत्मा भी राग के परिणाम का कारण होता (नहीं)। आहाहा! रागरूप परिणमे तथापि राग के कारणपने 'कोऽपि काले' (अर्थात्) किसी भी काल में कारणरूप होता (नहीं)। एक समय यदि राग का कारण

होवे तो सभी समय राग का कारण हुआ करे (और) राग(रूपी) कार्य आया करे; किसी दिन वीतरागभाव होवे नहीं।

केवल (-अकेला) आत्मा, स्वयं परिणमन-स्वभाववाला होने पर भी, दो बातें ली। अपरिणामी तो है द्रव्यदृष्टि से और पर्याय में परिणमन भी है। आहाहा! ज्ञानरूप से आत्मा परिणमता है कि जिस ज्ञान में आत्मा जानने में आता है ऐसे ज्ञानरूप से परिणमता है। आबालगोपाल सबको भगवान आत्मा अनुभव में आता है। आहाहा! ऐसे ('ना') अब मत कहना, मुझे जानने में नहीं आता, ऐसा कहना मत। आहाहा!

एक अमितगति आचार्य भगवान हुए हैं। उन्होंने योगसार में एक बात बहुत अच्छी कही है (योगसार प्राभृत, निर्जरा अधिकार, गाथा ३९) कि जैसे दीपक प्रकाशक है और उसका प्रकाश भी प्रगट होता है। प्रकाशक और प्रकाश; प्रकाशक अर्थात् द्रव्य और प्रकाश अर्थात् उसके परिणाम। उसके परिणाम प्रकाशरूप हों कि अंधकाररूप हों? अचल जी! प्रकाशक का परिणाम प्रकाशरूप है कि अंधकाररूप है?

मुमुक्षु: प्रकाशरूप है।

पू. लालचंदभाई: प्रकाशरूप होता है। ठीक है! दो बात हुईं, द्रव्य और पर्याय। अभी प्रकाश्य! प्रकाशक, प्रकाश और प्रकाश्य। ये घटपट है न, वो प्रकाश्य है। उसमें (प्रकाश में) वो (प्रकाश्य) प्रसिद्ध होता है; उसके अस्तित्व में घड़ा है, कपड़ा है, यह सोफा-सेट है, वगैरह वगैरह, समझे? तो आचार्य भगवान फरमाते हैं कि इस प्रकाश के द्वारा जो प्रकाश्य घटपट आदि हैं, जो प्रकाशक से भी भिन्न हैं और प्रकाश पर्याय से भी वो भिन्न हैं, वो तो तेरे को जानने में आते हैं (कि) वो हैं, वो हैं, वो हैं। और जो प्रकाश है उसमें प्रकाशक कथंचित् अभिन्न है, वो दीपक तेरे को ख्याल में नहीं आता है? ये क्या है? हमको तो आश्चर्य होता है, हमको तो (आश्चर्य होता है)। आहाहा! यह दृष्टांत हुआ।

अब सिद्धांत! कि ये ज्ञायकतत्त्व तो द्रव्य है। ज्ञायकतत्त्व तो द्रव्य है। द्रव्य-गुण-पर्याय की चर्चा, आज तो ली न। यह द्रव्य है और उसका, ज्ञायक का **चैतन्यानुविधायिपरिणामलक्षणः** (पंचास्तिकायसंग्रह गाथा १६) उसका नाम उपयोग है। उपयोग आत्मा का लक्षण है; और लक्षण लक्ष्य को समय-समय पर प्रसिद्ध करता ही है तो ही लक्षण बनता है लक्षण, नहीं तो लक्षण बने नहीं। ध्यान रखना बसंतभाई! उसमें तो बहुत ध्यान देते हैं हमारे ट्रस्ट में, लेकिन ध्यान तो वास्तव में इसमें देने जैसा है। आहाहा! प्रभु! समय मिला है यह।

कि आत्मा ज्ञायक है, उसका परिणाम जानना-देखना प्रगट होता है। प्रगट होता है, समय-समयवर्ती। ये (१)ज्ञायक और (२)ज्ञान दो हुए और तीसरा (३)ज्ञेय। ये रागादि, शरीरादि, छहद्रव्य, देव-गुरु-शास्त्र सब ज्ञेय हैं। तो तू जानता है कि इस ज्ञान में, इस ज्ञान में यह (कागज़) जानने में आता है, यह (पर चीज़) जानने में आता है, यह (पर चीज़) जानने में आता है। जो ज्ञान से भिन्न है उसको मैं जानता हूँ - ऐसा तेरे विश्वास में आ गया है। मगर मैं कहता हूँ कि ज्ञान से जो अभिन्न ज्ञायक है, सर्वथा भिन्न नहीं है - ऐसा पाठ है। ज्ञान से ज्ञायक सर्वथा भिन्न नहीं है, कथंचित् अभिन्न है। तो ऐसे तेरे ज्ञान की पर्याय में ज्ञायक जानने में आता हुआ होने पर भी 'मैं उसको नहीं जानता हूँ' और जो (कागज़) सर्वथा

भिन्न है 'उसको मैं जानता हूँ' - (ये) तेरा अज्ञान है। जा! आहाहा! ऐसे भगवान आत्मा यह ज्ञायकतत्त्व (जाननेवाला, जाननेवाला, जाननेवाला, जाननेवाला है। ज्ञाता है, कर्ता नहीं है। किसी का कर्ता भी नहीं है और किसी का कारण भी नहीं है। आहाहा!

यह प्रतिष्ठा महोत्सव होता है उसका कर्ता कौन? कर्ता तो स्वयं होता है मगर कारणपने प्रभु बने। आहाहा! सेक्रेटरी, Joint (संयुक्त) सेक्रेटरी। है ही नहीं। आहाहा! मानना भी नहीं। मेरी उपस्थिति है तो यह अच्छा कार्य होता है - बिल्कुल गलत बात है। आहाहा!

मुमुक्षु: अब दूसरा महोत्सव नहीं करना है?

पू. लालचंदभाई: आहाहा! इस ज्ञान में ज्ञायक की स्थापना यह महोत्सव है, ऐसा महोत्सव करना है। ऐसा महोत्सव प्रत्येक को करना है। आहाहा! वो तो उसके कालक्रम में आनेवाला हो उस समय आ जाता है। क्या कहा? उसका कोई कर्ता नहीं है और उसका कोई कारण भी नहीं है। आहाहा! परमाणु में पर्याय होवे, परमाणु की पर्याय होवे शीत-उष्ण। होती है कि नहीं? तो भी वह परमाणु सामान्य शीत-उष्ण पर्याय का कर्ता नहीं है और उसका कारण भी नहीं है। शीत-उष्ण पर्याय का कर्ता पर्याय और कारण-कार्य भी पर्याय में है। आहाहा!

ये सब गुरुदेव ने बता दिया है अपने को, कोई नई बात नहीं है। अपने को तो उन्होंने जो कहा, उसका स्वाध्याय करते हैं कि गुरुदेव ऐसा अपने को कह गए हैं। कभी भूल हो गई, विस्मरण हो गया, तो अभी स्मरण करना है। उनका, ज्ञानी के वचनों का स्मरण करके, आत्मा का स्मरण करके अंदर में चले जाना (है), बस। इतना ही काम है। आहाहा!

स्वयं परिणमन-स्वभाववाला होने पर भी, अपनेको शुद्धस्वभावत्वके आत्मा, शुद्धस्वभाव है आत्मा का और परिणमन स्वभाव भी है ज्ञान का। ज्ञान बिना का कोई जीव नहीं होता। राग बिना का तो जीव हो परंतु ज्ञान बिना का (कोई जीव नहीं होता)। ज्ञान के बिना कोई एक जीव बता दो मेरे को! और राग नहीं है - ऐसे तो अनंत सिद्ध परमात्मा हैं, मैं बताता हूँ आपको। उनमें राग नहीं है। तो भी जीव हैं कि नहीं? और जीव का ज्ञान होता है कि नहीं होता है उनको? कि राग है तो जीव का ज्ञान होवे और राग हो तो राग का ज्ञान होवे? ऐसा है नहीं। ज्ञान होता है तो ज्ञान का ज्ञान और पर का ज्ञान अपने आप हो जाता है। उसमें पुरुषार्थ की जरूरत (नहीं है)।

आत्मा के अनुभव में पुरुषार्थ है। आहाहा! स्वप्रकाशक में पुरुषार्थ है। परप्रकाशक में या स्वपरप्रकाशक में पुरुषार्थ नहीं है। वो तो सहज हो जाता है, उसका स्वभाव है। **शुद्धस्वभावत्वके कारण रागादिका निमित्तत्व न होनेसे** भगवान आत्मा को राग का कारण मत कहो। अरे! वीतरागभाव का भी कारण नहीं है, बंध का कारण नहीं है और मोक्ष का कारण भी आत्मा नहीं है। सूक्ष्म बात है!

होनेसे अपने आप ही रागादिरूप नहीं परिणमता आत्मा। अब, रागरूप परिणमता है तब आत्मा उसमें निमित्त नहीं है, तो रागरूप परिणमता है तब कोई दूसरा निमित्त है या नहीं? कि हाँ! दूसरा निमित्त है, मैं निमित्त नहीं हूँ। वह (परपदार्थ) निमित्त नहीं स्थापित करना है। हाँ! फिर आया, आया, निमित्त आया, निमित्त आया। अरे! आत्मा निमित्त नहीं है वो बताना है। वो (परपदार्थ) निमित्त है,

ये कहाँ बताना है? तेरी नजर कहाँ की कहाँ चली जाती है।

मुमुक्षु: बराबर! हाँ बराबर!

पू. लालचंदभाई: पंडितजी साहब! आहाहा! रागरूप परिणमता है तब परपदार्थ निमित्त है कि नहीं? आया कि नहीं? वो परपदार्थ निमित्त है ऐसा बताने का आशय नहीं है। मैं निमित्त नहीं हूँ- वो बताने का आशय है। आहाहा! मगर आत्मा को कर्ता माना और कारण भी माना इसलिए उसकी दृष्टि पलटती (नहीं है)। आत्मा केवल ज्ञाता है। आहाहा! केवल जानना-देखना उसका स्वभाव है, भव्य हो कि अभव्य हो। जानना-देखना, आहाहा! स्वभाववाला है। ज्ञान-स्वभावी आत्मा है, जानना-देखना उसका काम है। वह भी सहज ज्ञान होता है। ज्ञान को करे तो ज्ञान होता है, ऐसा है नहीं। हाँ! आत्मा का ज्ञान होता है तब उपचार से ज्ञान का कर्ता, सम्यग्दर्शन का कर्ता उपचारमात्र से कहने में आता है। आहाहा! पहले तो अनुपचार समझ, बाद में उपचार की बात कर। आहाहा!

शुद्धस्वभावत्वके कारण रागादिका निमित्तत्व न होनेसे स्वयं अपने आप अकेला-अकेला ज्ञायक आत्मा ज्ञानरूप परिणमनस्वभाववाला होने पर भी, अकेला-अकेला, अकेला-अकेला वह रागादिरूप परिणमता नहीं है। **परन्तु जो अपने आप रागादिभावको प्राप्त होनेसे** आहाहा! जो मोह नाम का कर्म है उसमें राग का एक अनुभाग है, उसमें एक रस है राग का। राग दो जगह - (जब तक) होता है तब तक दो जगह पर होता है। नहीं होता है तब एक भी जगह पर, एक भी जगह पर होता नहीं है। आहाहा!

रागादिभावको प्राप्त होनेसे आत्माको रागादिका निमित्त होता है यानि आत्मा निमित्त नहीं होता है। राग का उत्पाद होता है तो उसमें निमित्तकारण कौन? कि **परसङ्गः एव** (समयसार आत्मख्याति टीका कलश १७५) आहाहा! मोह का उदय उसमें निमित्त होता है। भगवान आत्मा निमित्तकारण नहीं है। **ऐसे परद्रव्यके द्वारा ही, शुद्धस्वभावसे च्युत होता हुआ ही, रागादिरूप परिणमित किया जाता है**। आहाहा! **परिणमित किया जाता है** - मानो वह निमित्तकर्ता, ऐसी बात की कि मानो कर्ता-कर्म की भ्रांति हो जाए। आहाहा! जैसे कि वह परिणमन करवाता है। शब्द का ऐसा अर्थ नहीं है। आहाहा! यह ભા.ના કા.ગળ (गूढ़ पत्र) है। वह तो, समयसार का तो अर्थ सम्यग्दृष्टि करता है। बाकी उसकी (मिथ्यादृष्टि की) चोंच डूबती नहीं है। यहाँ यह बात करते हैं कि यह नवतत्त्वरूप परिणमता है। (टाइम) सवा आठ से नौ है न? चार मिनिट- तीन मिनिट बाकी हैं।

क्या कहा? यह भागवत्-कथा है, आत्म-कथा है। ओहोहो! सूक्ष्म तो है मगर 'मैं ज्ञाता हूँ और कर्ता नहीं हूँ' तो तेरा ज्ञान भी सूक्ष्म हो जाएगा। 'मैं कर्ता हूँ' उसमें स्थूल हो जाएगा। आहाहा! स्थूल होते-होते परिणाम क्या आएगा वो परमात्मा जानें। आहाहा!

यह आत्मा है, भगवान आत्मा, उसमें परिणाम होता है नवतत्त्व का। हैं न? नवतत्त्व हैं। नवतत्त्व नहीं हैं, ऐसा नहीं है। नवतत्त्व का उत्पाद होने पर भी उसका कारण भगवान आत्मा नहीं है। आत्मा को इसका (पर का) कारण, इसका (पर का) कारण मैं हूँ, इसका कारण मैं हूँ, कर्म का कारण मैं हूँ, कर्म बंधता है उसका कारण मैं ही हूँ, हाथ पाँव हिलता है उसका कारण मैं हूँ। कर्ता तो नहीं हूँ, इसका (हाथ हिलाने का) कर्ता तो (नहीं हूँ) मगर हिलता है तब मैं निमित्तकारण हूँ (ऐसा मानेगा तो मिथ्यात्व

दृढ़ होगा)। आहाहा!

क्या कहा? हाथ हिलता है और पाँव चलता है, उसका मैं कर्ता तो नहीं हूँ। रमणभाई! मगर वो हिलते हुये हाथ का मैं निमित्त हूँ। गया दुनिया में से। ये पैर चलता है न वो तो अपने आप चलता है। मैं चलाता तो नहीं हूँ मगर चलता है न, तब मैं उसका निमित्त हूँ। अरे! भगवान कहाँ गया तू, तेरी दृष्टि कहाँ गयी? आहाहा! ऐसा स्थूल दृष्टांत तो दिए, अभी सूक्ष्म परिणाम की बात है। कि राग उत्पन्न होता है? कि हाँ! होता है। कौन ना बोलता है! जहाँ तक वीतराग परमात्मा नहीं होता है न, तब तक साधक की दशा में भी पराश्रित राग अपनी योग्यता (से और) निमित्तकारण चारित्रमोह का उदय - ऐसा होता है। तो वो जो राग होता है तब राग का कारण मैं हूँ। आहाहा! तू कारण नहीं है। कारण चारित्रमोह का उदय है। तो उपादानकारण कौन? ऐसा प्रश्न आया। (कलश-टीका) १७४-१७५ कलश है। उसमें प्रश्नकार ने प्रश्न किया कि इस राग का कारण कौन है? यदि आत्मा नहीं है तो कौन है? कलश-टीका इधर नहीं है न! कल लाना जरा इधर कलश-टीका। महत्त्व की बात है। आहाहा!

तो इसका कारण कौन है? कारण दो प्रकार का होता है - एक उपादानकारण और एक निमित्तकारण। आहाहा! निमित्त को मानता है कि नहीं? तो निमित्त की तो बात चलती है। निमित्त की बात तो चलती है। तू (जैसा) मानता है वैसा निमित्त का स्वरूप नहीं है। तू निमित्त को कर्ता मानता है, हम निमित्त को अकर्ता मानते हैं (और) उपादान को कर्ता जानते हैं।

तो वहाँ प्रश्न उठा कि एक कार्य में दो कारण होते हैं भैया? कि हाँ! होता है, बराबर है! एक उपादानकारण (और) एक निमित्त कारण। तो उपादानकारण कौन? आहाहा! मिट्टी का दृष्टांत दिया वहाँ, मिट्टी का। घड़ा होता है न! तो जो घट की पर्याय है न, वो अंतर्गर्भित पर्यायरूप परिणमन शक्ति परिणमती, परिणमती, परिणमती (हुई और) घटरूप पर्याय प्रगट होती है। उसका जो घट हुआ न, उसका उपादानकारण घट की पर्याय है और निमित्तकारण कुम्हार है। आहाहा!

मिट्टी है तो घड़ा होता है - ऐसा है नहीं। आहाहा! और घट होता है तब निमित्तकारण भी है। निमित्तकारण भी (है)। अकेला-अकेला मिट्टी घटरूप नहीं परिणमती है। (अज्ञानी कहेते हैं) कि हमारी (बात) आई! तेरा क्या आया? आहाहा! ये मिट्टी घट की पर्याय का कर्ता भी नहीं है और कारण भी नहीं (है)।

मुंबई में एक बार वाँचन में ये बात कही कि कुम्हार से तो घड़ा होता नहीं मगर मिट्टी से भी घड़ा होता नहीं। उसमें मीठाभाई-मिट्ठूभाई बैठे थे, जुगराजजी का लड़का। भाई क्या कहा आपने? फिर से कहो! फिर से कहो। अभी टाइम तो हो गया कल बात....तो क्या कहा?

मैंने कहा कि फिर से मैं कहता हूँ कि घट की पर्याय होती है। वो होती है, वो (तो) नक्की बात है। वो खरगोश के सींघ (के समान) नहीं है। अस्ति है, भले एक समय की (मगर) अस्ति (तो) है। उसका कर्ता कुम्हार तो नहीं है मगर उसका कर्ता मिट्टी भी नहीं है। वो कर्ता-कर्म क्रिया सब उसमें होती है; षट्कारक का, आहाहा! क्षणिक उपादान। उसका नाम क्षणिक उपादान है। आहाहा!

एक बार उपादान-निमित्त की चर्चा की एक पुस्तक निकली (थी)। तो उनकी लड़की है, भारिल्लजी साहब की लड़की है। नाम तो मैं भूल गया। उसने लेख लिखा था कि कार्य की उत्पत्ति में

नियामक कारण योग्यता ही है। कार्य की उत्पत्ति में नियामक, नियम से (जो कोई) कारण है तो वो उसकी योग्यता है, तत्समय की पर्याय है। त्रिकाली द्रव्य भी नहीं और परद्रव्य भी नहीं। स्वद्रव्य भी नहीं और परद्रव्य भी नहीं। तो परिणाम पर (से) दृष्टि छूटकर त्रिकाली द्रव्य पर आ जायेगी और ज्ञाता आत्मा साक्षात् बन जायेगा। ऐसा करने जैसा है।